ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
ISSN No.: 2347-2944, RNI:UPBIL04292, REG. No.: 561/2013-2014 Vol.-2, No.-2, PP-322-329,YEAR-2015

ईस्ट इण्डिया कम्पनी शासन के अन्तर्गत 1793 ई0 का चार्टर ऐक्ट

❑ डॉ0 कृष्णकान्त

सार – *उस समय की परिस्थितियां यह थीं कि 1789 ई0 में महान फ्राँसीसी क्रान्ति हुई थी, बाद में जिसमें अत्यधिक रक्तपात हुआ था। इंग्लैण्ड पर भी इस क्रान्ति का अत्यधिक प्रभाव पड़ा। फ्राँसीसी क्रान्तिकारी इस क्रान्ति को इंग्लैन्ड में भी फैलाना चाह रहे थे, जिसको कि इंग्लैन्ड के प्रधानमंत्री पिट् रोकना चाहते थे। फ्राँसीसी आक्रमण का भी भय बढ़ रहा था। "ऐसी अवस्था में 1793 में कम्पनी का चार्टर पार्लियामेंट की मंजूरी के लिए दुबारा पेष हुआ, क्योंकि 1773 में केवल बीस वर्ष के लिए पूर्वी देशों से कम्पनी को व्यापार करने की आज्ञा दी गई थी। वह समय 1793 में खत्म हो गया था।" ब्रिटिश जनता इस बात की इच्छुक थी कि पूर्वी देशों से व्यापार का एकमात्र अधिकार केवल कम्पनी को ही न मिले, बल्कि औरों को भी मिले। परन्तु नियंत्रण बोर्ड के प्रधान एवं पिट् कम्पनी के पक्ष में थे।*

प्रस्तावना– पिट्स इन्डिया ऐक्ट के माध्यम से बोर्ड ऑफ कन्ट्रोल की स्थापना की गई थी। इसके द्वारा ईस्ट इन्डिया कम्पनी पर ब्रिटिश संसद का नियन्त्रण स्थापित कर दिया गया, किन्तु ब्रिटेन की तत्कालीन सरकार इससे सन्तुष्ट न हो सकी। 1793 ई0 का चार्टर ऐक्ट लॉर्ड कार्नवालिस के कार्यकाल (गवर्नर जनरल के रूप में) के अन्तिम समय में पारित किया गया, जिसमें पूर्व में पारित अधिनियमों की कई धाराओं को सम्मिलित किया गया था, जिसके कारण 1793 ई0 के चार्टर ऐक्ट की धाराओं की संख्या बहुत अधिक हो गई, परन्तु यह बहुत परिवर्तन मूलक सिद्ध नहीं हुआ। इस अधिनियम के सम्बन्ध में डॉ0 बैनर्जी ने कहा है – "इस एकीकरण की व्यवस्था द्धारा कोई बड़े संवैधानिक परिवर्तन नहीं किये गए।'

चूँकि फ्राँस के साथ हो रहे युद्ध के कारण इंग्लैण्ड के कुछ ही व्यापारियों ने भारत के साथ व्यापार करने की स्वतंत्रता की मांग की थी, परन्तु पिट् एवं बोर्ड ऑफ कन्ट्रोल के अध्यक्ष के चलते "कम्पनी को बीस वर्ष के लिए दुबारा पूर्वी देशों से व्यापार करने का एकमात्र अधिकार मिल गया," साथ ही कहा गया कि – "कोर्ट ऑफ डायरेक्टर्स समय–समय पर एक ऐसी गुप्त कमेटी नियुक्त करेंगे, जिसकी सदस्य संख्य तीन से अधिक न हो, उन विशिष्ट कार्यों के निमित्त, जिन्हें डायरेक्टर्स निर्दिष्ट करेंगे।" इस प्रकार यह ऐक्ट बिना किसी खास शोर शराबे के पारित हो गया। ब्रिटिश समाचार पत्रों ने भी इस ऐक्ट के पारित होने की खबर को कोई विशेष महत्व नहीं दिया। डॉ0 ए0 सी0 बैनर्जी ने इस ऐक्ट के सम्बन्ध में लिखा है – "भारत में ब्रिटिश प्रान्तों पर ईस्ट इन्डिया कम्पनी का अधिकार आने वाले समय में बनाए रखने के लिए, कुछ निश्चित प्रतिबन्धों के साथ व्यापार संचालन के लिए, प्रेसीडेसियों की शासन व्यवस्था में विधि की स्थापना के लिए और इनमें बेहतर प्रशासन बनाए रखने के लिए, कम्पनी के लाभ और राजस्व से प्राप्त धन को विशिष्ट कार्यों में लगाने और कल्कत्ता, मद्रास तथा बम्बई शहरों में अच्छी कानून और व्यवस्था बनाए रखने के लिए एक ऐक्ट।"

1793 का चार्टर एक्ट–

इस ऐक्ट में जो धाराएं सम्मिलित थीं, वे निम्न प्रकार से थीं –

जोशी के अनुसार, '1793 ई0 के इस चार्टर ऐक्ट ने कम्पनी के एकाधिकार को बनाए रखने के

मध्यकालीन एवं आधुनिक इतिहास विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ (उ0प्र0) भारत

साथ–साथ उसे बीस वर्शों के लिए पूर्वी देशों से व्यापार करने की अनुमति प्रदान कर दी।' 'साथ ही एक उप–गवर्नर की नियुक्ति का प्रबन्ध भी 1793 ई0 के इस चार्टर ऐक्ट ने कर दी।'

इस अधिनियम के द्वारा कम्पनी के आर्थिक ढांचे को नियमित किया गया। कुछ विशेष धन राशि को कम्पनी की वार्षिक बचत के रूप में अनुमानित कर लिया गया। उस वार्षिक बचत में से कम्पनी के ऋणों के भुगतान के लिए पाँच लाख पौन्ड की व्यवस्था की गई। इतनी ही धनराशि का प्रयोग हिस्सेदारों को लाभांष की 8% से 10% की वृद्धि के रूप में किया जाना था। किन्तु इस विभाजन को कभी व्यावहारिक परिणति न प्राप्त हो सकी, क्योंकि यह कल्पित बचत कम्पनी कभी प्राप्त न कर सकी।

"इस ऐक्ट का अत्यन्त महत्वपूर्ण प्रावधान यह था कि अब बोर्ड ऑफ कन्ट्रोल के सदस्यों एवं बोर्ड के कर्मचारियों का वेतन कम्पनी के भारतीय राजस्व से दिया जाएगा। यह दुर्भाग्यपूर्ण प्रथा लगभग 125 वर्षों तक चलती रही।" ईस्ट इण्डिया कम्पनी के अधीन प्रान्तों का शासन सपरिषद गवर्नर को सौंप दिया गया। परिषद में गवर्नर सहित चार सदस्य होते थे। परिषद का सदस्य वही व्यक्ति हो सकता था, जिसने कम्पनी की सेवा भारत में कर्मचारी के रूप में कम से कम 12 वर्ष तक की हो। आर0 पी0 वर्मा लिखते हैं कि – "इस राजलेख ने गवर्नर – जनरल को प्राधिकृत किया कि वह अपनी परिषद के सदस्यों में से एक सदस्य को उप–सभापति नियुक्त कर सकता है, जो गवर्नर जनरल की अनुपस्थिति में उसका स्थानापन्न होगा।" जब कभी गवर्नर जनरल या अन्य प्रेसीडेन्सियों के गवर्नर का पद रिक्त होगा और यदि उस समय कोई उत्तराधिकारी उपस्थित नहीं है तब सम्बन्धित परिषद का वरिष्ठ सदस्य (पदानुक्रम में द्वितीय सदस्य) उस पद को तब तक धारण करेगा जब तक कि उस पद पर किसी उपयुक्त उत्तराधिकारी या व्यक्ति को नियुक्त न कर दिया जायें। यदि किन्हीं विशेष परिस्थितियों में गवर्नर जनरल या गवर्नर का पद रिक्त है और उसकी परिषद में केवल एक ही सदस्य उपस्थित है तब वही सदस्य गवर्नर जनरल या गवर्नर के पद का कार्यभार संभालेगा और यदि उसे परिषद के किसी सदस्य की आवश्यकता पड़ती है तब वह कम्पनी की सेवा में कार्यरत उसी प्रेसीडेन्सी के उस वरिष्ठ व्यापारी को परिषद का सदस्य बना लेगा, जो परिषद का सदस्य होने की पर्याप्त योग्यता रखता हो। गवर्नर जनरल या गवर्नर के पद पर कार्यरत व्यक्ति में अपने पदानुरूप सभी शक्तियां निहित होंगी और उसे भी वही भत्ते एवं वेतनादि प्राप्त होंगे जो गवर्नर जनरल या गवर्नर को होते हैं किन्तु इस कार्यकाल की निरन्तरता तक उसे परिषद के सदस्य के रूप में प्राप्त होने वाले वेतनादि नहीं प्रदान किये जायेंगे।

कम्पनी के कर्मचारियों के वेतन एवं पदोन्नति के सम्बन्ध में इस ऐक्ट की धाराओं को विष्णु भगवान ने इस प्रकार उद्यत किया है – "कम्पनी का वही समर्पित कर्मचारी, जिसने भारत में 3 वर्ष बिताए हों, भविष्य में कम्पनी के अधीन 500 पौण्ड प्रतिवर्ष तक के वेतन वाले पद को धारण करने का पात्र होगा। छः, नौ और बारह वर्ष की अवधि तक सेवा करने वाले क्रमशः 1500, 3000 और 4000 पौण्ड प्रतिवर्ष वेतन वाले पद धारण कर सकेंगे।"

गवर्नर जनरल तथा प्रान्तीय गवर्नरों को दो तरह के अधिकार प्रदान किये गये थे। पहले तरह के अधिकारों के तहत "गवर्नर जनरल तथा गवर्नरों को अपनी परिषदों के निर्णयों को बदलने का अधिकार दिया गया।" इनमें भारत में शान्ति व्यवस्था बनाए रखने, सुरक्षा एवं अंग्रेजी प्रदेशों पर पड़ने वाले प्रभाव सम्बन्धी अधिकार सम्मिलित थे। दूसरे तरह के अधिकारों को परिषद की सिफारिश से ही लागू किया जा सकता था, जिनमें न्याय विधि तथा कर सम्बन्धी मामले शामिल थे।

1793 ई0 में ही बंगाल, बिहार एवं उड़ीसा के मुफस्सिल में कार्नवालिस की योजना भी लागू की गई, जिसके चलते ब्रिटिश शासन काल में न्याय – प्रशासन के क्षेत्र में भारतीय प्रथाओं को एक सम्मानित स्थान प्रदान किया गया एवं प्रथाओं को कानून का

एक महत्वपूर्ण स्रोत माना गया। जैन लिखते हैं कि, "यह न्यायोचित और तर्कपूर्ण था, क्योंकि व्यवहार में 'शास्त्रों का कानून', या 'शारा का कानून' जनता द्वारा उसकी पूरी पवित्रता के साथ नहीं अपनाया जाता था और सभी प्रकार की प्रथाएं उसमें समाविष्ट हो गई थीं। यह न्यायोचित और साम्यापूर्ण था कि जिस कानून को जनता व्यवहार में अपनाती चली आ रही है, उसी को उन पर लागू किया जाए, अपेक्षाकृत धार्मिक पुस्तकों में निहित सैद्धान्तिक कानून के।" यदि जनता को उनकी प्रथाओं से वंचित कर दिया जाता, तो यह उनके प्रति कठोरता होती। यह जानना आवश्यक है कि समय के प्रवाह के साथ प्रथाओं को सिद्ध करना एक कठिन कार्य हो गया। न्यायालय द्धारा नई प्रथाओं को मान्यता देने से इन्कार किया जाने लगा, अदालतों ने इस बात पर जोर देना प्रारम्भ किया कि वह केवल प्राचीन प्रथाओं को ही मान्यता दे सकती है। इस प्रकार के विवाद की स्थिति काफी समय तक बनी रही।

1793 ई0 के ऐक्ट ने यह स्पष्ट किया कि कमान्डर–इन–चीफ अब किसी भी परिषद का सदस्य नहीं होगा, जब तक कि उसे विशेष रूप से संचालकों द्वारा सदस्य के रूप में नियुक्ति प्रदान न कर दी जाए। इससे पूर्व कमान्डर–इन–चीफ को परिषद का सदस्य होना आवश्यक था। इस ऐक्ट द्वारा प्रान्तीय सरकारों के सैनिक तथा असैनिक शासन प्रबन्ध, राजस्व संग्रह तथा भारतीय रियासतों के साथ युद्ध और सन्धि से सम्बन्धित विषयों पर नियंत्रण तथा निर्देशन का अधिकार सपरिषद गवर्नर जनरल को प्रदान कर दिया गया। "इस ऐक्ट में पास किया गया कि गवर्नर – जनरल, गवर्नर, प्रधान सेनापति तथा कुछ अत्यन्त ऊँचे अधिकारियों को भारत से बाहर जाने की छुट्टी नहीं मिलेगी, जब तक वे अपने पद पर होंगे।"

इस ऐक्ट ने यह प्रावधान भी कर दिया था कि यदि ये उच्च पदाधिकारी बिना पूर्वानुमति लिए भारत से बाहर जाते हैं, तो ये समझा जाएगा कि वे स्वैच्छिक पदमुक्त हो गए हैं। यह भी कहा गया कि गवर्नर–जनरल, परिषद के सदस्य, अन्य प्रेसीडेन्सियों के गवर्नर कमान्डर–इन–चीफ या कम्पनी के अन्य कर्मचारियों द्वारा संचालकों द्वारा प्राप्त दिशा–निर्देशों की अवहेलना करने पर उनके विरूद्ध दन्डात्मक कार्यवाही की जाएगी। गवर्नर जनरल के अधिकारों एवं कार्यों के विषय में इस ऐक्ट ने जो स्पष्टीकरण दिया, उस सम्बन्ध में आर0सी0 अग्रवाल लिखते हैं, "गवर्नर जनरल की शक्ति और अधिकारों को बम्बई और मद्रास की सरकार पर और अधिक दृढ़ किया गया। यह कहा गया कि जब गवर्नर जनरल किसी प्रान्त की यात्रा के लिए जाए, तो वहां का गवर्नर तथा सारा शासन गवर्नर जनरल के अधीन होगा। गवर्नर जनरल बंगाल से अपनी अनुपस्थिति के समय काम चलाने के लिए किसी भी कौंसिल के सदस्य को अपनी कौंसिल का उप–प्रधान नियुक्त कर देगा।" यह भी कहा गया कि गवर्नर जनरल यदि कभी बंगाल की प्रेसीडेन्सी से अनुपस्थित है, तब भी वह अन्य प्रेसीडेन्सियों की सरकारों और कम्पनी के अन्य कर्मचारियों को आदेश एवं निर्देश दे सकता था। इन आदेशों का भी वे उसी प्रकार आज्ञा पालन करेंगे, जिस प्रकार से गवर्नर–जनरल की बंगाल प्रेसीडेन्सी में उपस्थित होने पर करते हैं।

1793 ई0 में बंगाल, बिहार एवं उड़ीसा की प्रसिद्ध न्याय – सुधार की योजना प्रारम्भ की गई, जिस में बहुत सी नई बातें सम्मिलित की गईं। इस नई व्यवस्था ने पुरानी व्यवस्था में कितने ही मूलभूत परिवर्तन कर दिये। 'यह योजना भारत के विधिक इतिहास में एक विशेष स्थान रखती है, क्योंकि इसमें ऐसे आधारभूत तत्व विद्यमान थे, जिनका कि किसी भी सभ्य देश की न्याय–व्यवस्था में होना आवश्यक है।' कलकत्ता में स्थित सर्वोच्च न्यायालय का नौ सैनिक क्षेत्राधिकारी बढ़ाकर खुले हुए समुद्रों तक कर दिया गया, अर्थात् "कलकत्ता सुप्रीम कोर्ट का एडमिराल्टी अधिकार तटस्थ सागरीय मामलों में विस्तृत कर दिया गया।" कार्यपालिका एवं न्यायपालिका के कार्यों को पृथक–पृथक करने के उद्देश्य से माल अदालतों को समाप्त कर दिया गया और उनमें

विचरित होने वाले विषयों को दीवानी अदालतों के अन्तर्गत कर दिया गया। अब कलेक्टर केवल अपने जिले में लगान वसूली के लिए जिम्मेदार रह गया। दीवानी न्याय का प्रशासन करने की शक्ति, जो कि अभी तक कलेक्टरों में निहित थी, अब दीवानी अदालतों को दे दी गई एवं दीवानी अदालतों को भी नए ढंग से गठित किया गया। इस प्रकार कलेक्टरों की दीवानी विषयों का फैसला करने की शक्ति ही नहीं बल्कि माल सम्बन्धी विषयों में फैसला करने की भी शक्ति वापस ले ली गई। अब माल सम्बन्धी विषय एक साधारण दीवानी विषय की भांति ही दीवानी अदालत द्वारा विचारित किये जाते थे।

जैन लिखते हैं कि, "सन् 1772 से अब तक अपनाई गई नीति में यह एक आमूल परिवर्तन था। अभी तक माल सम्बन्धी विषय सदा से कलेक्टरों के विचारण के ही अधीन रखे जाते थे, किन्तु अब उन्हें दीवानी अदालतों को हस्तान्तरित कर दिया गया। अदालतों को माल की वसूली के सम्बन्ध में किसी प्रशासनिक कार्य से मतलब नहीं था। इस प्रकार कलेक्टर अब केवल प्रशासनिक अधिकारी ही रह गया।"

"इस विषम स्थिति से त्राण दिलाने के उद्देश्य से दीवानी अदालतों को अब यह शक्ति प्रदान की गई कि वे कलकत्ता से 10 मील दूर के क्षेत्रों में ब्रिटिश प्रजाजनों को निवास करने की अनुमति उस समय तक न दे, जब तक कि वह इस आशय का शर्तनामा न लिखें कि वह 500 रू0 मूल्य तक के भारतीयों द्वारा लाए गए सभी प्रकार के दीवानों मामलों में स्थानीय अदालतों के अधीन रहेंगे।" इस व्यवस्था का महत्व इस बात में था कि इससे भारतीयों को ब्रिटिश प्रजाजनों द्वारा किये जाने वाले दमनकारी कार्यों के विरूद्ध कुछ सुरक्षा मिल गई। इस व्यवस्था को एक सीमित मूल्य तक के विषयों के सम्बन्ध में ही लागू किया गया था। 500 रू0 से ऊपर के मूल्य के विषय ब्रिटिश प्रजाजन के विरूद्ध अब भी सुप्रीम कोर्ट में ही लाए जा सकते थे, कम्पनी की अदालतों में नहीं। ब्रिटिश प्रजाजन के अलावा अन्य यूरोपवासी, जो कि कलकत्ता के बाहर निवास करते थे, मोफस्सिल दीवानी अदालतों के ही अधीन थे। इस प्रकार अंग्रेज व्यापारियों के दमन – कार्यों से भारत वासियों को कुछ सुरक्षा प्रदान करने की चेष्टा की गई।

इस अधिनियम मे पिछले अधिनियमों के कुछ नियमों को शामिल किया गया था, जिनमें से एक था भारत में कम्पनी के द्वारा अपने राज्य – क्षेत्र में विस्तार करना और उससे सम्बन्धित योजनाओं को कार्यरूप देने को ब्रिटेन की राष्ट्रीय नीति, प्रतिष्ठा और उसके सम्मान के विरूद्ध माना गया। जबकि व्यवहारिकता में भारत में कार्यरत कम्पनी के उच्चाधिकारियों ने कभी भी इस नियम का पालन नहीं किया, बल्कि इसके विपरीत नीतियों को ही संचालित किया। प्रो0 त्रिपाठी ने वेलेजली को उद्यत करते हुए लिखा है कि – "यद्यपि व्यवहार में वेलेजली, गवर्नर जनरल ने साम्राज्य विस्तार की नीति अपनाई।" विशेष परिस्थितियों में किसी भारतीय राजा या रियासत के साथ युद्ध या संधि करना आवश्यक हो जाय तो युद्ध के उद्देश्यों एवं कारणों को सिलसिलेवार विवरण इंग्लैण्ड में कम्पनी के बोर्ड ऑफ डायरेक्टर्स के पास अनुमोदन के लिए भेजे दिया जाय। यह प्रावधान भी किया गया कि बोर्ड ऑफ कन्ट्रोल के दो सदस्यों के लिए प्रिवी कौंसिल का सदस्य होना आवश्यक नहीं था। ईस्ट इन्डिया कम्पनी के कर्मचारियों की पदोन्नति के सम्बन्ध में ज्येष्ठता के सिद्धान्त का कठोरता से पालन किया जाएगा। गवर्नर जनरल या गवर्नर आदि का पद रिक्त होने की दशा में उस पद पर स्थायी नियुक्ति न हो पाने तक के लिए, उसकी परिषद के सदस्यों में से जो भी ज्येष्ठ और सबसे ऊँचे ओहदे पर होगा, उसे नियुक्त कर दिया जाएगा। ऐसी दशा में केवल कमान्डर–इन–चीफ इस पद पर कार्य नहीं कर सकेगा।

गवर्नर जनरल तथा भारत में सभी सेनाओं का कमांडर–इन–चीफ, दोनों पदों पर एक हीं व्यक्ति कार्य नहीं कर सकता था, जब तक कि बोर्ड ऑफ डायरेक्टर्स कमांडर–इन–चीफ को इस पद के लिए विशेषरूप से वैध घोषित न कर दें और साथ ही

फोर्ट विलियम की परिषद का सदस्य भी नियुक्त कर दें। इसी प्रकार बम्बई में भी डायरेक्टर्स, कमांडर–इन–चीफ को गवर्नर के रूप में नियुक्त न करे दें तब तक वह बम्बई प्रेसीडेन्सी की परिषद का सदस्य भी नहीं रह सकता था। जब कभी कमांडर–इन–चीफ को गवर्नर जनरल या गवर्नर का कार्यभार सौपा जायेगा तब उसका पदानुक्रम गवर्नर जनरल या गवर्नर के बाद होगा किन्तु कमांडर–इन–चीफ को परिषद के सदस्य के रूप में पदनाम धारण करने का तथा इस पद के अनुरूप वेतन लेने का अधिकार नहीं होगा जब तक कि उसे असाधारण तरीके से बोर्ड ऑफ डायरेक्टर्स इसकी अनुमति न प्रदान कर दें। वर्मा लिखते हैं कि 'इस ऐक्ट ने सिविल सिर्विस के सदस्यों तथा शान्ति के न्यायाधीशों को नियुक्त करने का अधिकार दे दिया एवं बिना अनुज्ञप्ति के शराब बेचने पर प्रतिन्ध लगा दिया।' इस प्रकार शराब की दुकान खोलने एवं उसे बेचने हेतु अनुज्ञप्ति प्राप्त करना आवश्यक हो गया। जब प्रशासन की जिम्मेवारियां बढ़ने लगीं, तब इस बात की आवश्यकता महसूस हुई कि सिविल सर्विस के सदस्यों को भारत की शासन–व्यवस्था, समाज व्यवस्था, भाषाओं एवं परम्पराओं से भली–भाँति परिचित होना चाहिए। सिविल सर्विस में प्रवेश पाये तरूणों को इन विषयों की शिक्षा देने के लिए 1801 ई0 में कलकत्ता में फोर्ट विलियम कॉलेज शुरू हुआ। बाद में इसी प्रयोग से इंग्लैण्ड में ईस्ट इन्डिया कॉलेज की स्थापना हेलीबरी में हुई। ''इस ऐक्ट के पहले केवल तीन प्रकार के व्यक्ति ही न्याय अधिकरणिक थे – बंगाल का गवर्नर जनरल तथा बम्बई एवं मद्रास के गवर्नर, गवर्नर जनरल तथा गवर्नरों की काउंसिलों के सदस्य तथा कलकत्ता की सुप्रीम कोर्ट के सभी न्यायाधीष। कम्पनी के अधीन तमाम क्षेत्रों में शान्ति बनाए रखने के लिए अधिकरणों की यह संख्या बहुत कम थी।''

सपरिषद गवर्नर जनरल को यह अधिकार प्रदान किया गया कि वह किसी ऐसे व्यक्ति को, जो कम्पनी के अधीन नागरिक सेवा में कार्यरत हो, शान्ति के न्यायाधीश नामक न्यायाधिकारी के रूप में नियुक्त कर सकेगा। इस पद के लिए केवल वही अधिकारी उपयुक्त होंगे, जो कम्पनी के सम्मति–पत्रित कर्मचारी हों। ईस्ट इन्डिया कम्पनी के अधीन किसी भी पद पर कार्यरत कर्मचारियों के लिए रिश्वत, उपहार आदि लेना निशिद्ध कर दिया गया। इस तरह के कृत्यों को दुराचरण एवं अपराध घोषित कर दिया गया और दोषी पाए जाने वाले व्यक्ति के लिए कठोर दन्ड देने का प्रावधान कर दिया गया। गवर्नर जनरल, परिषद के सदस्यों तथा अन्य प्रेसीडेन्सियों के गवर्नरों को व्यक्तिगत व्यापार करने, कर वसूलने आदि के लिए मनाही कर दी गई थी। न्यायाधीशों के लिए किसी भी तरह के व्यापार करने पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया। ''सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशों द्वारा किसी भी तरह का व्यापार करना या व्यापारिक गतिविधि में लिप्त होना विधि सम्मत नहीं था।'' ब्रिटेन के सम्राट को रिट जारी करके कम्पनी की सेवा में कार्यरत किसी व्यक्ति या संस्था को कार्यमुक्त करने का पूरा अधिकार प्रदान किया गया। वह अपने हस्ताक्षरयुक्त पत्र द्वारा जिस पर भारतीय विषयों के बोर्ड ऑफ कमिश्नर के प्रधान के प्रतिहस्ताक्षर होंगे, सैनिक–असैनिक प्रशासन अथवा कम्पनी की अन्य सेवाओं में कार्यरत व्यक्ति या संस्था को सदैव के लिए बंद कर सकेगा अथवा दिये गये समय तक के लिए कार्यमुक्त कर सकेगा। इस आशय के आदेश आठ दिनों के भीतर कम्पनी के प्रधान को सौंप दिये जायेंगे और बोर्ड ऑफ डायरेक्टर्स को आदेश के अमल करने हेतु प्रेशित कर दिये जायेंगे।

इस अधिनियम में कम्पनी के असैनिक कर्मचारियों के पदोन्नति देने से सम्बन्धित उपबन्ध (उपनियम) भी बनाए गए। 'चार्टर में यह भी कहा गया कि बंगाल के गवर्नर जनरल, बम्बई तथा मद्रास प्रेसीडेन्सियों की परिषदों में से प्रत्येक के सदस्यों की संख्या 3 होंगी तथा इन सदस्यों के लिए यह आवश्यक था कि अपनी नियुक्ति के समय उन्हें रहते हुए भारत में बारह वर्ष हो गए हों।' जब किसी प्रेसीडेन्सी की परिषद के सदस्य का पद रिक्त हो जाय और उस

पद के लिए विधिवत चुना हुआ उत्तराधिकारी उपस्थित न हो ; ऐसे समय पर बंगाल में सपरिषद गवर्नर जनरल तथा बम्बई में सपरिषद गवर्नर को भारत में कम्पनी की सेवा में कार्यरत किसी वरिष्ठ व्यापारी को उस पद पर नियुक्त करने का अधिकार प्रदान किया गया। नियुक्ति प्राप्त व्यक्ति के वही कर्त्तव्य और अधिकार होंगे, जो बोर्ड ऑफ डायरेक्टर्स द्वारा नियुक्त परिषद के विधिवत सदस्य को प्राप्त होते हैं। बोर्ड ऑफ डायरेक्टर्स जब तक किसी उत्तराधिकारी को चुनकर नहीं भेजते हैं उस समय तक वह कार्यभार संभालेगा और उसे विधिवत सदस्य की भांति ही भत्ते और वेतन दिये जायेंगे। गवर्नर जनरल तथा उसकी परिशद को प्रेसीडेन्सी नगरों, जैसे बम्बई एवं मद्रास आदि में सड़कों की सफाई, देखरेख एवं मरम्मत करने के लिए मेहत्तरों की नियुक्ति करने का अधिकार दिया गया। वे इन बस्तियों में साफ–सफाई कर, उपशुल्क लगाकर इस कार्य के लिए जरूरी धन भी प्राप्त कर सकेंगे। ''इन उपबन्धों द्वारा भारत के एकीकरण की प्रक्रिया, जिसका शुभारम्भ रेग्यूलेटिंग ऐक्ट ने किया था, और आगे बढ़ गई।''

बोर्ड ऑफ डायरेक्टर्स को कोर्ट ऑफ प्रोपराइटर्स की समस्त प्रकार की सभाओं की कार्यवाहियों के संक्षिप्त विवरण, आदेश और कार्यवाहियों की नकलें बोर्ड ऑफ कण्ट्रोल को प्रेशित करेगा। बोर्ड ऑफ डायरेक्टर्स के लिए सैनिक, असैनिक और राजस्व से सम्बन्धित सभी विषयों के पत्रों, सुझावों एवं प्रलेखों की नकलें आठ दिनों के भीतर बोर्ड ऑफ कण्ट्रोल के समक्ष प्रस्तुत करना अनिवार्य बना दिया गया। बोर्ड ऑफ डायरेक्टर्स समय–समय पर विशेष प्रयोजनों के लिए अपने सदस्यों में से एक सीक्रेट कमेटी नियुक्त करेगा, जिसके सदस्यों की संख्या तीन से अधिक नहीं होगी। यदि भारत स्थित प्रेसीडेन्सी की सरकार युद्ध एवं सन्धि के विषयों से सम्बन्धित अपने सुझाव ब्रिटेन भेजना चाहती है तो वह डायरेक्टर्स की सीक्रेट कमेटी को अपने सुझाव पूर्णतः गुप्त तरीके से प्रेषित कर देगी। सीक्रेट कमेटी को इन सुझावों की नकलों को अन्तिम आदेश प्राप्त करने के लिए बोर्ड के पास भेजना होगा।

इस अधिनियम ने ईस्ट इन्डिया कम्पनी को अगले बीस वर्षों के लिए पूर्वी देशों के साथ व्यापार करने का अधिकार तो प्रदान कर दिया, परन्तु साथ ही इंग्लैण्ड के व्यापारियों को निजी व्यापार के लिए तीन हजार टन तक माल के व्यापार की भी अनुमति दे दी गई। साथ ही इस अधिकार के प्रयोग करने की दषा में अनेक प्रतिबन्ध लगा दिये गए, जिसके चलते इसका कभी भी व्यावहारिक प्रयोग नहीं हो सका। इस व्यापारिक सुविधा के सम्बन्ध में विष्णु भगवान ने लिखा है कि – ''अब जबकि तीन हजार टन तक माल का व्यापार करने की अनुमति किसी भी व्यक्ति को प्राप्त हो गई थी, किन्तु इस अधिकार के साथ इतनी अधिक बंदिशें लगा दी थीं कि व्यापारी इस अलाभकारी चैनल से व्यापार करने के इच्छुक नहीं थे।''

1793 ई0 के चार्टर ऐक्ट के बारे में कहा जाता है कि इस अधिनियम का कोई संवैधानिक महत्व नहीं है। इस अधिनियम के पारित होने के समय कम्पनी के कर्मचारियों के सम्बन्ध में टिप्पणी करते हुए वारेन हेस्टिंग्स ने स्वयं कहा कि – ''वे उनके (भारतीयों के) सम्मान को क्षति पहुँचाते हैं, लुटते और सताते हैं और पार्लियामेंट द्वारा बनाया गया कोई भी नियम उन्हें स्वच्छन्दतापूर्वक लंपटता करने से नहीं रोक सकता है।''

विधि के क्षेत्र में देखने पर हमें पता चलता है कि ''कम्पनी की अदालतों में विधि व्यवसाय की करूण व दयनीय स्थिति का विवरण सन् 1793 के बंगाल रेगुलेशन क्रमांक की प्रस्तावना में बहुत ही स्पष्ट रूप से दिया गया है। इस रेगुलेशन द्वारा पहली बार कम्पनी की अदालतों के लिए एक नियमित विधि व्यवसाय की व्यवस्था की गई।'' भारतीय वकीलों की बंगाल, बिहार और उड़ीसा की दीवानी अदालतों में नियुक्ति की व्यवस्था इस रेगुलेशन द्वारा की गई। इस रेगुलेशन की एक विशेषता यह थी कि इसके अन्तर्गत केवल हिन्दू व मुस्लिम ही वकीलों की सूची में दर्ज किये जा सकते थे।

इस प्रकार हम यह अवष्य कह सकते हैं कि यह ऐक्ट भारतीय संविधान के प्रक्रियागत विकास में एक कदम अवश्य है। इस अधिनियम की धाराओं ने भारतीय शासन व्यवस्था में कोई महत्वपूर्ण परिवर्तन नहीं किया, फिर भी यह भारतीय संविधान को एक बड़े अंतराल तक प्रभावित करता रहा। '1793 ई0 के इस चार्टर ऐक्ट ने कम्पनी के कार्यकाल को बढ़ाने के साथ–साथ गवर्नर जनरल के अधिकारों में भी वृद्धि कर दी।' इस चार्टर ऐक्ट की प्रमुख विशेषता यह थी कि इसने भारतीय कोष में अतिरिक्त भारवृद्धि कर दी थी, अर्थात बोर्ड ऑफ कन्ट्रोल के सदस्यों को आगे से वेतन भारतीय कोष से दिया जाना था। यह धारा 1919 ई0 के ऐक्ट के पास होने तक कार्यरूप में परिणति प्राप्त किये रही, जिससे कि भारतीय कोष को अतिरिक्त हानि उठानी पड़ी। इस सम्बन्ध में गुरूमुख निहाल सिंह ने लिखा है – "इस चार्टर के साथ वह बुरी रूढ़ि स्थापित हुई, जो 1919 ई0 तक अपने बुरे परिणामों के साथ चलती रही।"

वास्तव में यह चार्टर ऐक्ट संगठनकारी था, जिसके द्वारा पुरानी व्यवस्था को दृढ़ किया गया, परन्तु नई धाराएं बहुत कम बनाई गई। कई पुरानी धाराओं को पुनः दोहराया गया एवं उनका स्पष्टीकरण तथा विस्तार कर दिया गया। इस चार्टर ऐक्ट ने प्रान्तीय गवर्नर एवं गवर्नर जनरल के अधिकारों में वृद्धि करने के साथ–साथ गवर्नर जनरल को कौंसिल के निर्णयों की अवहेलना करने का अधिकार भी प्रदान कर दिया। प्रान्तों के गवर्नरों को उसकी आज्ञा के बिना देशी राज्यों से युद्ध अथवा सन्धि करने का अधिकार प्राप्त नहीं हुआ।'

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. अग्रवाल, रामचन्द्र – भारतीय संविधान का विकास तथा राष्ट्रीय आन्दोलन, पृ0 32.
2. बैनर्जी, ए0सी0, इंडियन कंस्टीट्यूशनल डाक्यूमेंट्स, भाग 1 पृ0 14.
3. वही, पृ0 – 32.
4. मुखर्जी, पी0 डी0, इंडियन कंस्टीट्यूशनल डाक्यूमेंट्स, भाग – 1, पृ0 60.
5. बैनर्जी, ए0सी0, इंडियन कंस्टीट्यूशनल डाक्यूमेंट्स, भाग 1, पृ0 120.
6. जोशी, जी0एन0, द न्यू कंस्टीट्यूष्ज्ञन ऑफ इन्डिया, पृ0 11.
7. गुप्ता, एस0के0 (संपा0), आधुनिक भारत का इतिहास (1756–1858), पृ0 166.
8. श्रीवास्तव, के0के0, भारत का वैधानिक एवं संवैधानिक इतिहास, पृ0 258.
9. वर्मा, आर0पी0, भारत का संवैधानिक इतिहास, पृ0 25.
10. भगवान, विष्णु, इंडियन कंस्टीट्यूशनल डेवेलपमेंट, पृ0 43.
11. मिश्रा, रवीन्द्र नाथ, भारत का संवैधानिक का विकास तथा राष्ट्रीय आन्दोलन का इतिहास, पृ0 25.
12. जैन, एम0 पी0, भारतीय विधि का इतिहास, पृ0 405.
13. अग्रवाल, रामचन्द्र, भारत का संवैधानिक का विकास तथा राष्ट्रीय आन्दोलन, खण्ड 1, पृ0 32.
14. अग्रवाल, रामचन्द्र – भारती का संवैधानिक का विकास तथा राष्ट्रीय आन्दोलन, खण्ड 1, पृ0 32.
15. जैन, एम0 पी0, भारतीय विधि का इतिहास, पृ0 117.
16. त्रिपाठी, जी0पी0, भारत का वैधानिक एवं संवैधानिक इतिहास, पृ0 354.
17. जैन, एम0 पी0, भारतीय विधि का इतिहास, पृ0 121.
18. जैन, एम0 पी0, भारतीय विधि का इतिहास, पृ0 112.
19. त्रिपाठी, जी0पी0, भारत का वैधानिक एवं संवैधानिक इतिहास, पृ0 355.
20. वर्मा, रामचन्द्र, भारत का संवैधानिक इतिहास, पृ0 25.
21. श्रीवास्तव, के0के0 भारत का वैधानिक एवं संवैधानिक इतिहास, पृ0 259.

22. मुखर्जी, पी0 डी0, इंडियन कंस्टीट्यूशनल डाक्यूमेंट्स, भाग – 1, पृ0 75.
23. अग्रवाल, रामचन्द्र, भारत का संवैधानिक का विकास तथा राष्ट्रीय आन्दोलन, खण्ड 1, पृ0 32–33.
24. श्रीवास्तव, के0के0 भारत का वैधानिक एवं संवैधानिक इतिहास, पृ0 28.
25. भगवान, विष्णु, इंडियन कंस्टीट्यूशनल डेवेलपमेंट, भाग–1, पृ0 41.
26. इल्बर्ट, हिस्टोरिकल इन्ट्रोडक्शन टू द गवर्नमेंट ऑफ इन्डिया, पृ0 75.
27. जैन, एम0 पी0, भारतीय विधि का इतिहास, पृ0 428.
28. वीरकेश्वर, भारतीय संविधान एवं शासन, पृ0 2.
29. अग्रवाल, रामचन्द्र, भारत का संवैधानिक का विकास तथा राष्ट्रीय आन्दोलन, खण्ड 1, पृ0 33.
30. रस्तोगी, दया प्रकाश, भारत का संविधान, पृ0 3.

*****